Included in the UGC Approved List of Journals

SAHITYASETU
ISSN: 2249-2372
A Peer-Reviewed Literary e-journal

Website: http://www.sahityasetu.co.in

Year-8, Issue-4, Continuous Issue-46, July-August 2018

राष्ट्रवाद की परख वाया 'तमस'

किसी भी राष्ट्र के उत्थान-पतन में उस राष्ट्र की जनता की अपने राष्ट्र के प्रति समर्पण, त्याग, कर्तव्य की भावना प्रमुख भूमिका निभाती है। राष्ट्र के प्रति अपनी जिम्मेदारी, कर्तव्य-बोध से राष्ट्रवाद का सम्बन्ध स्थापित होता है। व्यक्ति के स्वयं के हित के साथ सही मायने में पूरे राष्ट्र का हित जब तक नहीं जुड़ता तब तक राष्ट्रवाद के नाम खतरों की संभावना भी बनी रहती है। राष्ट्रवाद में नशा है। युगों से विश्व-इतिहास में धर्म का प्रयोग लोगों को भड़काने, मारने-काटने किया जाता रहा है। धर्म के सच्चे स्वरूप की बजाय धार्मिक विधिविधानों और मिथ्या बाह्याचारों को धर्म मानकर समाज परधर्म एवं परधर्मी पर हमले करता रहा है। ठीक उसी तरह राष्ट्रवाद की अगर सच्ची समझ विकसित नहीं हुई हो तो यह वैमनस्य, हिंसा, घृणा में तबदील हो जाता है। राष्ट्रवाद का सहारा लेकर राजनैतिक सत्ता जब अपने हित-साधन, अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति में जुट जाती है तब इन्सानियत की हत्या होती है। सत्ता का राष्ट्रवाद अक्सर कुत्सित-घृणित राष्ट्रवाद होता है। हिटलर और जर्मनी की राष्ट्रवादी जनता के बर्बर कृत्यों की कथाएँ (राष्ट्रवाद के नाम पर किये गए) सुन सहृदयी आज भी द्रवित हो उठते हैं।

राष्ट्रवाद के निर्णायक तत्वों में राष्ट्रीयता की भावना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। आधुनिक भारत में राष्ट्रवाद का विकास अंग्रेजी शिक्षा के परिणामस्वरूप हुआ है। अंग्रेजी शिक्षा-प्राप्त राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद, स्वामी विवेकानंद, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, नेताजी सुभाषचंद्र आदि सुधारकों, स्वातंत्र्य सेनानियों ने समाज के कल्याण व स्वतन्त्रता के लिए राष्ट्रवाद की भावना का प्रचार-प्रसार किया। उनके द्वारा प्रेरित राष्ट्रवाद मानवता पर आधारित था। लेकिन परवर्ती दौर में उसके सच्चे और अनुकरणीय रूप को छोड़कर विश्व के अधिकांश देशों की तरह भारत ने भी कट्टरता प्रेरित राष्ट्रवाद को अपनाया। परिणामतः कोई एक पक्षीय मत-मान्यता को राष्ट्रवाद की संज्ञा देकर विरोधी मत को पूर्णतया खारिज करने की प्रवृत्ति विकसित हुई। अतीत में आपातकाल को राष्ट्रवाद का समर्थन प्राप्त था। राष्ट्रवाद की आड़ लेकर कुछ मूर्ख, विवेकहीन, अंधे लोग महात्मा गांधी की हत्या को भी उचित ठहराने के प्रयत्न करते दिखाई देते हैं। वर्तमान समय में तो राष्ट्रवाद की मानो लहर दौड़ पड़ी है। राष्ट्र के विकास के नाम जनता हर परेशानी उठाने तैयार है। लेकिन शासक जनता की भावनाओं से खिलवाड़ कर उसका अनुचित फायदा उठाते हुए अपनी विचारधारा को स्थापित करने का प्रयत्न करने लगते हैं तब समाज में अन्याय, अत्याचार, अमानुषिकता, बर्बरता, हिंसा, विद्वेष, घृणा का संचार होने लगता है; जिसके अनेकों उदाहरण भारतीय देख चुके हैं, देख रहे हैं। राष्ट्रवाद के नाम अब तो स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है कि सत्ता के खिलाफ़ सही प्रश्न उठाना राष्ट्रद्रोह कहलाने लगा है और सत्ता की हाँ में हाँ मिलाना मानो राष्ट्रभक्ति बन गई है ! राष्ट्रवाद की आड़ में धार्मिक कट्टरता वर्षों से मानवीयता की हत्या करती आ रही हैं। कई बार चंद स्वार्थी तत्वों के प्रपंच में फंसकर लोग इन्सान से शैतान बन जाते हैं।

वस्तुतः राष्ट्रवाद की संज्ञा एकाधिकारवाद की प्रेरक है। राष्ट्रवाद एक राष्ट्र, एक भाषा, एक संस्कृति की स्थापना पर जोर देता है। राष्ट्र के विकास के लिए राष्ट्रवाद आवश्यक है, लेकिन वह कदापि इन्सानियत से ऊपर नहीं होना चाहिए। राष्ट्रवाद 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को चरितार्थ करता होना चाहिए।

राष्ट्रवाद के नाम पर शासक जब अपना धर्म भूल जाते हैं तब कैसी अमानवीयता मंडराती है, उसका यथार्थ चित्रण भीष्म साहनी जी ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'तमस' में किया है। मुरादअली के जाल में फँसा अनजान, निर्दोष नत्थू सुअर को मारता है और उस सुअर को मसजिद की सीढ़ियाँ पर डलवाकर राजनैतिक रोटियाँ सेंकी जाती हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् भिवंडी, बम्बई में हुए सांप्रदायिक दंगे और उसमें जलकर तबाह हो चुकी बुनकर बस्ती को देखते हुए लेखक के जेहन में 1946 के रावलपिंडी के दंगे कौंध आते हैं। भारत-विभाजन के नाम पर साम्प्रदायिकता का ज़हर फैलाकर राजनैतिक स्वार्थी तत्व अपनी रोटियाँ सेंकते आये हैं। इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही सन् 2002 में हुए गोधरा हत्याकाण्ड (गुजरात) की स्मृति किसी के दिमाग से जल्दी मिटने वाली नहीं है। धर्म की आड़ में सत्ता की मनमानी क्या-क्या कर-करवा सकती हैं, उसका उदाहरण कदाचित् प्रतिरोध-प्रतिक्रिया के नाम पर हुए उस जघन्य कांड से बढ़कर दूसरा कोई नहीं ! इस उपन्यास के ज़रिये सांप्रदायिक तत्वों के प्रपंच, लोगों की स्वार्थपरता, जातिवादी ध्रुवीकरण की राजनीति का पर्दाफाश करते हुए लेखक ने समाज को सही दिशा दिखाने का प्रयत्न किया है।

सन् 1946 में तत्कालीन अंग्रेज सरकार की मिलीभगत और उदासीनता के कारण देश में धार्मिक हमलों, हिंसा की अनेक वारदातें हुई थीं। भारत-पाकिस्तान के विभाजन के नाम और तत्पश्चात् वर्तमान समय तक हिन्दू-मुस्लिम के बीच जो दीवार निर्मित की गई है, वो टूटने के स्थान पर दिनोंदिन और अधिक मजबूत होती जा रही है। दलाल मुंशीराम का कथन उल्लेखनीय है –

> "अब हिन्दुओं के मुहल्ले में न तो कोई मुसलमान रहेगा और न मुसलमानों के मुहल्ले में कोई हिन्दू। इसे पत्थर की लकीर समझो। पाकिस्तान बने या न बने, अब मुहल्ले अलग-अलग होंगे, साफ़ बात है।"[1]

पाकिस्तान बने हुए पौनी शताब्दी होनी आई, लेकिन मुहल्ले अभी तक एक नहीं हुए (ना होने देंगे)। कितने अफसोस की बात है कि सन् 2017 में मेरठ जैसे नगर में हिन्दू बस्ती में ख़रीदे हुए मकान को वापस बेच देने मुसलमान को सरेआम बाध्य किया जाता है और शासक-जनता सब खामोश रहते हैं !

मनुष्य आखिर मनुष्य ही होना चाहिए, जाति-धर्म-भाषा-लिंग-रंग इत्यादि किसी भी प्रकार के विभेदों में बंटा हुआ नहीं ! लेकिन यह कभी हुआ नहीं। हिन्दू-मुसलमानों को हजारों साल पहले की एक ही नस्ल के बताते हुए रिचर्ड अपनी पत्नी लीज़ा से एकदम सत्य कहता है –

> "ये लोग अपने इतिहास को जानते नहीं है, केवल उसे जीते-भर हैं।"[2]

तथा-

> "सभी हिन्दुस्तानी चिड़चिड़े मिज़ाज के होते हैं, छोटे-से उकसाव पर भड़क उठनेवाले, धर्म के नाम पर खून करनेवाले, सभी व्यक्तिवादी होते हैं, . . ."[3]

यह व्यक्तिवाद राष्ट्रवाद को विकसित नहीं होने देता। राष्ट्र के नीति-निर्णायकों ने लगभग बहुजन समाज को उपेक्षित ही रखा है। राष्ट्रवाद के नशे में बहलाकर जनता को दिशा से भटकाने का कार्य न्यूनाधिक रूप से हर राजनैतिक पक्ष के कर्णधार करते आये हैं। ब्रजरंजन मणि का यह कथन शत-प्रतिशत सही है –

> "जिस समय पिछड़े-दबाए लोग सड़क पर चलने और सार्वजनिक कुओं-तालाब से पानी लेने जैसे अधिकारों से भी वंचित थे तो राष्ट्रवादी नेता एक संस्कृति, एक धर्म, एक राष्ट्र की गुहार लगा

रहे थे। सामाजिक एकता और समन्वय के नाम पर पारंपरिक शोषण के खिलाफ़ कभी-कभार के आड़े-तिरछे वक्तव्यों के अलावा इन्होंने कुछ नहीं किया।"[4]

आज भी देश का मीडिया और जनता गरीबी, बेकारी, कामगारों-किसानों की समस्या आदि को वाचा देने के स्थान पर मन्दिर-मस्जिद, घर-वापसी, लव-जिहाद, गाय, संस्कृत-संस्कृति के नाम पर राजनीति कर रहे हैं।

वर्तमान हालात में राष्ट्रवाद का राजनैतिक इस्तेमाल हो रहा है। राष्ट्रवाद की आड़ में अपनी-अपनी विचारधारा आरोपित की जाती हैं। आज राजनैतिक पक्ष महत्वपूर्ण बन गया है, चुनाव के लिए जाति-धर्म प्रमुख है, व्यक्ति की योग्यता कोई मायने नहीं रखती। जाति, धर्म आधारित बस्तियाँ, पारस्परिक वैमनस्य, भेदभाव, विभिन्न प्रकार की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक विविधताएँ इत्यादि के कारण भारत में राष्ट्रवाद गौण और व्यक्ति व जाति-समाज प्रमुख बन गये हैं। हक़ीकत को समझने वाले, सच का साथ देने वाले, आपसी भाईचारा, सौहार्द, सद्भाव बनाये रखना चाहने वाले सोहनसिंह, मीरदाद जैसे लोगों को बोलने का मौका ही नहीं दिया जाता, उन्हें सुनने और उनकी सोच के अनुसार कदम भरने कोई तैयार ही नहीं होता।

सत्ता के जाल में फँसकर अपना स्वार्थ साधने के लिए कुछ लोग किसी भी प्रकार के छल-प्रपंच करने तैयार रहते हैं। ऐसे लोगों का कोई ईमान नहीं होता। मुरादअली जैसे लोगों की इस देश में कमी नहीं, जो स्वयं बचकर अन्यों को आग़ में झोंक देते हैं। धर्म के नाम भावुक लोगों को बहका कर सांप्रदायिक तत्व समाज में तनाव निर्मित करते रहते हैं। सत्संग, मजहब के नाम पर वानप्रस्थजी, देवव्रत, मौलादाद जैसे लोग समाज को संस्कारों के रूप में अमन, भाईचारा, प्रेमभाव, आपसी सौहार्द प्रदान करने के स्थान पर भेदभाव, नफरत, घृणा, हिंसा दे रहे हैं। अमन को कायम रखने का अथाक प्रयत्न करते, गांधीवादी विचारधारा में पूर्णतया डूबे हुए सच्चे राष्ट्रवादी जरनैल की हत्या एक तरह से गांधी के विचारों की ही हत्या थी।

इन्सान की पहचान इन्सानियत से न होकर जब धर्म या जाति से होती है, तब भेदभाव बढ़ता है, व्यक्ति के साथ जाने-अनजाने अन्याय होता है। समाज की ऐसी दूषित मानसिकता पर भीष्म साहनी जी ने तीव्र प्रहार करते हुए इकबालसिंह को इकबाल अहमद बनाने की घटना का मार्मिक चित्रण किया है। राष्ट्रवाद की धज्जियाँ उड़ा देता यह वर्णन उल्लेखनीय है –

> "...इकबालसिंह के शरीर पर से सिखी की सब अलामतें दूर कर दी गई थीं और मुसलमानी की सभी अलामतें उतर आई थीं। पुरानी अलामतें हटाकर नई अलामतें लाने की देर थी कि इनसान बदल गया था, अब वह दुश्मन नहीं था, दोस्त था, काफिर नहीं था, मुसलमान था। मुसलमान के सभी दरवाज़े उसके लिए खुल गए थे।[5]

दंगों के समय हमेशा मारा जाता है निर्दोष आदमी ! समाज में नफरत का ज़हर फैलाने वाले लोग जनता को केवल भड़काते ही रहते हैं, सामना नहीं करते। बूढ़े-निस्सहाय, गरीब लोग ही अधिक शिकार बनते हैं। दंगों के दौरान सबसे अधिक करुण, त्रासद स्थिति महिलाओं की होती हैं। परधर्मी औरत की अस्मत के साथ खिलवाड़ करना धर्म माना जाता है !!

समाज में देवदत्त, राजो जैसे लोग भी है, जो अपनी परवाह न करते हुए विधर्मी की रक्षा के लिए, शांति स्थापित करने के लिए हर संभव प्रयत्न करते हैं। लेकिन बेकाबू भीड़ के सामने ऐसे मुठ्ठीभर लोगों की क्या बिसात ? केवल सद्भाव यात्रा कर देने से समाज में सद्भाव, सौहार्द नहीं स्थापित हो सकता। लीज़ा अपने पति रिचर्ड से प्रश्न करती हैं –

> "इतने गाँव तो जल गए रिचर्ड अभी भी तुम्हें काम है ? अब तुम्हें और क्या काम करना है ?"[6]

वर्तमान समय की सांप्रदायिक ताकतों को उनके कोई अंतरंग सदस्य या उनकी आत्मा इस तरह झिड़कती होगी सही ? अमानवीय, बर्बर, जघन्य कृत्यों के बाद भी कितनी फूहड़ दलील होती है, संवेदनहीन शासन-प्रशासन की –

"हम यदि हर घटना के प्रति भावुक होने लगें तो प्रशासन एक दिन भी नहीं चल पाएगा।"[7]

युगों से सत्ता ऐसी ही मानसिकता के साथ अपने पैर जमाये बैठी है और आम जन अपना सबकुछ गँवा कर चुपचाप आँसू बहाने विवश रहता है। अधिक करुण बात तो यह है कि जनता को सत्ता के छल-प्रपंच समझ में ही नहीं आते। 'तमस' में दंगों की स्थिति के दौरान उसे टालने का कोई प्रबंध नहीं किया जाता, जबकि दंगे टालना संभव था ही। पहले दंगे भड़काए जाते हैं, फिर उसे रोकने का प्रबंध भी नहीं किया जाता। चार दिन के पश्चात्, जब बहुत कुछ नष्ट हो जाता है, तब शासक कर्फ्यू लगाने का निर्णय लेते हैं। (2002 ई. के कांड की पुनः स्मृति...) चार दिन बाद हवाई जहाज में बैठकर उड़ने वाले अंग्रेज अफसर को देख भोली जनता गद्गद हो जाती हैं –

"गॉड सेव दि किंग, साहिब, गॉड सेव दि किंग !"[8]

अब इसे बदकिस्मती ही कही जाये या अंधता-अज्ञानता की पराकाष्ठा ?

'तमस' सत्ता व सांप्रदायिक तत्वों की नियत का पर्दाफाश करता है। वैविध्यसभर भारतीय समाज में राष्ट्रवाद की स्थापना के लिए छोटे-बड़े भेदभाव मिटाना अनिवार्य है। जब तक वर्ण और वर्णाधारित जातियाँ, वर्गभेद, धर्म और उससे जुड़ी पाखण्डी मान्यताएँ, मिथ्याचार रहेंगे तब तक राष्ट्रवाद महज् राजनैतिक जुमले से विशेष कुछ नहीं हो सकता। राष्ट्र के अनुयायियों के बीच किसी भी प्रकार के भेदभाव होते रहेंगे तब तक सच्चा राष्ट्रवाद कैसे संभव होगा ? भारत में राष्ट्रवाद के विकास के लिए आवश्यक है कि जाति-धर्म आधारित बस्तियाँ हटाकर सबको एकसाथ रहने, खाने-पीने के प्रेरित किया जाये, अंतर्जातीय – अंतर्धर्मीय विवाह अनिवार्य-से कर दिए जाये ! लोगों के मन में दृढ़ता से यह स्थापित किया जाये, बचपन से ही पाठ पढ़ाया जाये कि व्यक्ति, परिवार, समाज के हित से ऊपर राष्ट्र का हित है, राष्ट्र के कल्याण के सामने अन्य सबकुछ गौण है !

सन्दर्भ संकेत :

1. साहनी भीष्म, तमस, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौबीसवीं आवृत्ति-2007, (पेपरबैक-2008), पृ. 300
2. वही, पृ. 43
3. वही, पृ. 51
4. मणि ब्रजरंजन, हंस, दिल्ली, फरवरी-2002, पृ. 29
5. साहनी भीष्म, तमस, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौबीसवीं आवृत्ति-2007, (पेपरबैक-2008), पृ. 252
6. वही, पृ. 277
7. वही, पृ. 279
8. वही, पृ. 265

रवीन्द्र एम. अमीन, एसोसियेट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, देहगाम, जिला: गांधीनगर, गुजरात। सम्पर्क सूत्र : 9824662828 ravi6003@gmail.com